तृतीय अध्याय

"व्यक्तित्व व कृतित्व"

नामदेव - व्यक्तित्व

सन्त नामदेव की जीवन वृत्त सम्बन्धी सामग्री हिन्दी, मराठी, गुजराती तीनों भाषाओं के ग्रन्थों में उपलब्ध है । उन सभी उपलब्ध स्रोत ग्रन्थों के आधार पर डा॰ भागीरथ व डा॰ राजनारायण मौर्य ने उनका जीवन वृत्त प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि सन्त नामदेव की जन्मभूमि व जीवन का अधिकांश भाग मराठी प्रदेश में व्यतीत होने के कारण मराठी के स्रोत ग्रन्थ ही अमूल्य व विश्वसनीय समझने चाहिए ।[1] अन्तर्साक्ष्य के रूप में नामदेव चरित्र उपलब्ध है ।

आद्य आत्म-चरितकार

सौभाग्य से सन्त नामदेव ने मराठी में आत्मचरित्र लिखा है, यह आत्मकथा नहीं, अपितु भावना के क्षणों में अन्तर्मुखी वृत्ति से स्व-जीवन का विश्लेषण है । इसमें उन्होंने अपने जीवन के प्रमुख प्रसंगों व घटनाओं का वर्णन किया है । उनके ये अभंग नामदेव गाथा में "नामदेव चरित्र" शीर्षक के अन्तर्गत संगृहीत है ।[2] इसे "आत्मचरित्र" शीर्षक देना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है । इस प्रकार सन्त नामदेव को मराठी भाषा के आद्य आत्मचरितकार का गौरव प्राप्त हुआ ।

उन्होंने अपने गुरु गुरु सन्त ज्ञानेश्वर तथा उनके भाई सन्त निवृत्तिनाथ, सोपानदेव व भगिनी मुक्ताबाई के जीवन की प्रमुख बातों व उनकी समाधि का ओजों देखा हाल भी लिखा है । इस प्रकार वे प्रथम चरितकार भी कहे जाते हैं ।

1॰ सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली - पृ॰ 21

2॰ नामदेव गाथा - अभंग 1232 से 1383 तक

आत्मचरित द्वारा हमें उनके जीवन की निम्न मुख्य घटनाओं का परिचय मिलता है ।

"शिंपियाचे कुळी जन्म मज झाला", शिंपी अर्थात् दर्जी के कुल में जन्म लेकर नामदेव विट्ठल भक्ति से अपने पवित्र होने का वर्णन करते हैं । वे स्वयं स्वीकार करते हैं कि सन्त के लिए जाति पाँति सब व्यर्थ है, उनके लिए जाति की उपमा नहीं देनी चाहिए जैसे अपवित्र स्थान में उत्पन्न तुलसी, काकविष्टा में पैदा पीपल वृक्ष अपवित्र व अमंगल नहीं होता वैसे ही हीन जाति में जन्म लेकर भी नामदेव हरिनाम के प्रताप से पवित्र होने का उल्लेख करते हैं ।[1]

उनकी एकान्तिक भक्ति से उनके परिवार के सभी व्यक्तियों के विरोध का वर्णन करते हुए आगे कवि ने अपने जीवन के महत्वपूर्ण प्रसंग का वर्णन किया है । उन्हें सन्तों द्वारा "अन्तरीचा कोरा गुरुविण"[2] अर्थात् गुरु के बिना उन्हें कोरा सिद्ध कर गुरु बनाने की प्रेरणा तत्पश्चात् गुरु की खोज में नाथपन्थी विसोबा खेचर की शरण में जाना, उनके गुरूपदेश से "जळी स्थळी जिकडे तिकडे देव" अर्थात् ब्रह्म की सर्वव्यापकता की अनुभूति हो,[3] वे गुरु के चरणों में "सुखाचा सुखरूप सद्गुरु खेचर" कर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं[4] उनसे दिव्य दृष्टि प्राप्त होने के पश्चात् अपना सर्वस्व विट्ठल के चरणों में समर्पित करते हुए शतकोटि अभंग रचने की प्रतिज्ञा का वर्णन करते हैं । और अपने जीवन की सार्थकता ईश्वर भक्ति में मानते हैं ।[5]

- -

1. नामदेव गाथा - महाराष्ट्र शासन प्रकाशन - अभंग 1239
2. वही - अभंग - 1320
3. नामदेव गाथा - महाराष्ट्र शासन प्रकाशन - अभंग 1349
4. वही - अभंग - 1378
5. वही - अभंग - 1380

इस प्रकार जन्म, जाति, कुटुम्बियों द्वारा भक्ति का विरोध, गुरु बनाने की प्रेरणा, रससिद्ध कवीश्वर की भाँति शत कोटि अभंगों की रचना की प्रतिज्ञा कर अपना शेष जीवन काव्य व ईश्वर भक्ति में व्यतीत करना, इन सब प्रमुख प्रसंगों का प्रामाणिक व मुख्य आधार नामदेव द्वारा रचित आत्मचरित्र वर्णन ही है ।

संस्कारी भक्त

उनका जन्म महाराष्ट्र के सातारा ज़िले के नरसी बमनी गाँव के एक कट्टर विट्ठल भक्त शैव परिवार में सन् 1270 (शक 1192) में हुआ । उनके पिता दामाशेट व माता गोणाई को इस पुत्र रत्न की प्राप्ति पंढरपुर के विट्ठल की मान्यता द्वारा हुई । इनके यहाँ नित्यनियम से नैमित्तिक पूजा तथा पंढरपुर की वारी (यात्रा) की जाती थी । इनके जन्म के बाद वे पंढरपुर में रहने लगे थे । बाल्यावस्था से ही वे विट्ठल के अनन्य कट्टर भक्त थे । उनके हिन्दी पद "दूध कटोरे गडवे पानी" से इस बात की पुष्टि होती है कि उनके आग्रह पर भगवान् विट्ठल को नैवेद्य ग्रहण करना पड़ा, उनके हाथ का दूध पीना पड़ा ।[1] अत: बचपन से ही इन संस्कारों में पलने के कारण वे एक वारी सगुणोपासक भक्त बन गये थे । यही नहीं, अपितु उनके 15 व्यक्तियों के परिवार में उनकी दासी जनी भी एक विट्ठल भक्त कवियत्री थी । यह बात जनी या जनाबाई के अभंगों से प्रमाणित होती है ।[2] इस प्रकार की परम्परा से उनके एक संस्कारी भक्त होने की पुष्टि होती है ।

जाति

अन्तस्साक्ष्य के आधार पर उनकी जाति शिंपी या छीपा थी ।[3]

---

1. नामदेव गाथा - महाराष्ट्र शासन प्रकाशन - हिन्दी पद - 2319
2. वही - (जनाबाई चे अभंग - 4170)
3. शिंपियाचे कुळी जन्म मज झाला - नामदेव गाथा - महाराष्ट्र शासन प्रकाशन - 1232

मराठी में शिंपी दर्जी को कहते हैं । हिन्दी पदों में उन्होंने अपनी जाति का उल्लेख छीपा व "दरजी" शब्दों द्वारा किया है ।[1] उत्तर भारत में छीपा शब्द दर्जी तथा कपड़े छापने तथा रंगनेवालों को भी कहते हैं । जाति और वृत्ति से दर्जी होने पर भी इनका मन अपने व्यवसाय में नहीं रमा । वे स्पष्ट कहते हैं कि ऐसी अधम व निम्न अजाति में जन्म लेकर नामदेव भगवान् की शरण में आया है क्योंकि उसे समाज में सम्मान नहीं ।[2] वे परिवारजनों की कटु आलोचनाओं तथा विरोध को सहन करते हुए भगवद्भक्ति में अपना समय बिताते थे । इसकी पुष्टि उनके आत्मचरित के अभंगों से होती है ।

आध्यात्मिक विकास के तीन सोपान

अन्तःसाक्ष्य से पुष्ट उनके जीवन की 3 घटनाएं उनके जीवन में आध्यात्मिक विकास के तीन सोपान कहे जा सकते हैं । आर्त सगुणोपासक भक्त से ज्ञानी निर्गुणोपासक बनने का क्रमिक विकास नामदेव के जीवन की इन घटनाओं में दिखाई देता है ।

1. "अन्तरीचा कोरा गुरुवीण"

उनके अभंगों द्वारा ज्ञात होता है कि सन्त ज्ञानेश्वर व उनकी सन्त मंडली में नामदेव का बहुत मान था । उनकी भक्ति व महिमा से प्रभावित

---

1. (1) छीपे के घरि जनमु दैला - पद - 151
   (2) बापजी पेलाँ अन्तर कीधो
   जनम नाऊ दरजीनो दीधो - पद 114
   डा. मिश्र, डा. मौर्य - सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली - पद-151 व 114
2. (1) ऐसा अधमु अजाति नामदेऊ तउ सरनागति आइअले - पद-160
   (2) हीन दीन जात मोरी पंढरी के राया
   डा. मिश्र, डा. मौर्य - सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली - पद- 184

हो एक भेंट में सन्त ज्ञानेश्वर तथा उनके बड़े भाई निवृत्तिनाथ, सोपानदेव, सभी उन्हें नतमस्तक हो प्रणाम करते हैं पर उस आर्त भक्त में अहंकार भाव उत्पन्न होने से वे प्रतिवंदन नहीं करते हैं ।[1] यह बात सन्त ज्ञानेश्वर की भगिनी मुक्ताबाई जो बहुत स्पष्टवादिनी थी, खटकती है । वे सन्त-परीक्षा का प्रस्ताव रखती है ।[2] उस युग के सन्तों में ज्येष्ठ सन्त गोरोबा कुम्हार द्वारा थापी ठोकर ली गई परीक्षा में नामदेव 'अन्तरीचा कोरा गुरुहीन' अर्थात् निगुरा होने से कोरे सिद्ध किये जाते हैं । तब वे सन्त उन्हें गुरु बनाने की प्रेरणा देते हैं और उन्हें मुक्ताबाई के गुरु नाथपन्थी विसोबा खेचर के पास जाने का परामर्श देते हैं ।[3]

2. अवघा पाहे जिकडे तिकडे देव

विट्ठल की आज्ञा से नामदेव विसोबा खेचर को ढूंढते हुए औंढ्या नागनाथ के मन्दिर में पहुंचते है वहाँ उन्हें अपने कुष्ठयुक्त पैर को शिवलिंग पर रखे सोया हुआ पाया । यह देखते ही वे क्रोधित हो पैर हटाने के लिए कहते हैं । विसोबा खेचर ने कहा "मैं बीमार हूँ, मेरे पैर को तुम स्वयं ही उठाकर वहाँ रखो जहाँ शिवलिंग न हो । जब नामदेव उनका पैर जिधर रखते हैं उसी ओर शिवलिंग को प्रकट हुए देख उनकी महत्ता को समझ वे उनके चरणों में गिर पड़ते हैं और उनका शिष्यत्व स्वीकार कर लेते हैं ।[4]

इस घटना से यह सिद्ध होता है कि विसोबा खेचर ने उन्हें भगवान की सर्वव्यापकता का बोध कराया । नामदेव को ब्रह्मप्राप्ति के लिए विवेक और वैराग्य की आवश्यकता बताई । मस्तक पर हाथ रखकर तत्त्वमसि का

---

1. नामदेव गाथा - महाराष्ट्र शासन प्रकाशन - अभंग-1315 से 1317
2. वही - अभंग- 1318 से 1326
3. वही - अभंग- 1328 से 1336
4. वही - अभंग- 1337 से 1379

उपदेश दिया । नामदेव ने अनेक स्थलों पर विसोबा खेचर का गुरुरूप में सम्मानपूर्वक स्मरण किया है ।[1]

विसोबा खेचर नाथपंथी शैवमतावलम्बी थे । उनका शिष्यत्व स्वीकार करने के पश्चात् गुरु परम्परा से वे नाथपन्थी शैव बन गये । गुरु दीक्षा के बाद उन्हें नाथ पन्थ के विचारधन सहज ही मिल गये और तब से वे अन्ध सगुणोपासक नहीं रहे अपितु उनमें व्यापक दृष्टि के कारण निर्गुणोपासना सजग हुई और तभी से वे मूर्तिपूजा की सतहिकता को समझकर निर्गुणी सन्तों की वाणी में बोलने लगे कि "पाषाणदेव भक्तों" से बोलता है ऐसा कहने व समझनेवाले दोनों ही मूर्ख हैं ।[2] और एक हिन्दी पद में स्पष्ट व साहस से अपनी सीमित दृष्टि की भूल को स्वीकार करते हुए घोषित करते हैं कि ---

"भूक भजीना भूक [illegible] भजीना
भूके चित्त अवतार भरीना ।।"[3]

इसलिए अब वे मन्दिर की मूर्ति को फूल पत्ती नहीं चढ़ाना चाहते क्योंकि सर्वव्यापी ईश्वर तो फूल पत्ती सभी में है ।[4] और अब इस बोध के पश्चात् तो वे निर्गुण भक्ति के महल में पहुँच गये हैं अतः सगुण भक्ति रूपी सीढ़ी का त्याग कर दिया है ।[5] अर्थात् उस ससीम में ही असीम को देखने की व्यापक दृष्टि उन्हें प्राप्त हुई है ।[6]

---

1. नामदेव गाथा - महाराष्ट्र शासन प्रकाशन, अभंग- 1359
2. पाषाणाचा देव बोलेचि ना कधी । हरि भवव्याधि केवी फेडे ।
   दगडाची मूर्ति मानिला ईश्वर । परि तो साचार देव भिन्न
   पुस्तराचा देव बोलत भवांते । सांगते ऐकते मूर्ख दोघे ।
   नामदेव गाथा, महाराष्ट्र शासन प्रकाशन, अभंग- 1369
3. डा॰ मिश्र व डा॰ मोर्य सम्पादित - स॰ना॰हि॰प - पद- 134
4. फूलनी देव की पाती देवा । इहि विधि नाम न जाने सेवा ।
   --- वही - हिन्दीपद-21
5. पाया महल तज तजी निसरनी - वही - पद - 56
6. सर्वदेव की सेवा जाने । तो दिव्य दृष्टि है सकल पिछाने ।
   --- वही - पद, 20

इस प्रकार अन्तसाक्ष्य से विसोबा खेचर ही उनके गुरु सिद्ध होते हैं । इसकी पुष्टि नामदेव की गुरु परम्परा से भी होती है ।[1]

आदिनाथ — मत्स्येन्द्रनाथ — गोरक्षनाथ — गैनीनाथ — निवृत्तिनाथ — ज्ञाननाथ — विसोबा खेचर — नामदेव — चोखामेला —

इनके समकालीन सन्त ज्ञानेश्वर का नाम श्रद्धा से लेने से कुछ विद्वानों ने ज्ञानेश्वर को भी नामदेव का गुरु माना है ।[2] पर वे परात्पर गुरु कहे जा सकते हैं क्योंकि वे ही उनकी प्रेरक शक्ति थे ।

दासी जनाबाई के एक अभंग द्वारा सोपानदेव को भी गुरु कहा[3] पर अन्तःसाक्ष्य से इसका समर्थन नहीं होता ।[4]

अतः अन्तःसाक्ष्य व बहिःसाक्ष्य से पुष्ट प्रमाणों के आधार पर विसोबा खेचर ही इनके दीक्षा गुरु हैं । दीक्षा का अर्थ ही है जागरूकता । विसोबा खेचर ने ही उन्हें निर्गुण रस की अनुभूति करवाई । जागरूकता उत्पन्न करनेवाला ही गुरु होता है ।

3. "अन्तरीचे गुज बोलो काही"

सन्त नामदेव की भक्ति के आन्तरिक गुप्त रहस्य को जानने की इच्छा से ही संत ज्ञानेश्वर ने उन्हें अपने साथ लेकर तीर्थयात्रा की थी । इस तीर्थ यात्रा का नामदेव के जीवन में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है । इस सन्तमंडली या सन्तमेला के साथ नामदेव ने पूरे साढ़े सात वर्ष व्यतीत किये थे । इस पहली तीर्थयात्रा का वर्णन स्वयं नामदेव ने मराठी में "तीर्थावली" नाम से किया है।[4]

---

1. श्री ज.रा.पागारकर - मराठी वाङ्मयाचा इतिहास - पृ. 339
2. क्षितिमोहन सेन - Medieval Mysticism - पृ. 56.
3. नामदेव गाथा - जनाबाईचे अभंग - 411
4. नामदेव गाथा - तीर्थावली - अभंग - 903 से 964

इस यात्रा में अनेक चमत्कारिक घटनाओं से ज्ञानेश्वर व नामदेव एक दूसरे से प्रभावित हुये । दोनों ने एक दूसरे के प्रति प्रशसोद्गार प्रकट किये है । नामदेव की दृष्टि में ज्ञानदेव "सद्गुरुराज" है तो ज्ञानेश्वर ने उनकी भक्ति से परिचित हो "अन्तरंग भक्त" व "प्रेम का पुतला" के विशेषणों से विभूषित किया । इस यात्रा की मुख्य घटना जिससे भक्ति मार्ग की श्रेष्ठता प्रतिपादित होती है । इस प्रकार वर्णित है :-

यात्रा की अवधि में प्रभास तीर्थ के पास एक कूप में पानी कम होने से सन्त ज्ञानेश्वर अपने योग बल से सूक्ष्म शरीर धारण कर नीचे उतरे और अपनी तृषा बुझाई तो नामदेव ने अपनी भक्ति की शक्ति से ही कूप के पानी को ऊपर सींचा और अपनी तृषा शमन के अतिरिक्त दूसरों को भी लाभान्वित किया । इस प्रकार योग मार्ग कष्ट साध्य व व्यक्तिगत हित का साधन है पर भक्तिमार्ग सुलभ व सर्वभूतहित सिद्धि दाता है । इस घटना द्वारा नामदेव ने ज्ञानेश्वर को भक्तिमार्ग की महिमा स्वयं दिखाई । इस प्रकार यात्रा का लाभ यह हुआ कि ज्ञानेश्वर नामदेव की ऐकान्तिक भक्ति के रहस्य से परिचित हुए और उन्हें ज्ञानयुक्त भक्ति का महत्व भी समझाया ।

इस यात्रा में ही उत्तरभारत में मुसलमान आक्रान्ताओं द्वारा मूर्तिभंजन का दृश्य नामदेव स्वयं अपनी आँखों से देखकर निर्गुणोपासना के महत्व को समझ सके । इस प्रकार ज्ञानेश्वर की प्रेरणा व विसोबा खेचर के उपदेशों से उनकी निर्गुण भक्ति अधिक सुदृढ हुई ।

उनके अभंगों तथा समकालीन सन्तों की उक्तियों से इस की पुष्टि होती है कि उस युग के महान् सन्त, ज्ञानी, दार्शनिक सन्त ज्ञानेश्वर ही नामदेव की प्रेरक शक्ति थे । उन्हीं के प्रभाव व प्रेरणा से ही नामदेव के जीवन व व्यक्तित्व को नया मोड मिला, नई दिशा मिली, नई दृष्टि मिली जिससे नामदेव समान सन्त की सृष्टि हुई । इस प्रकार नामदेव के जीवन के ये तीन

सोपान उन्हें आर्त भक्त से निर्गुणोपासक ज्ञानी भक्त बनने के द्योतक है । भगवद्गीता में आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी ज्ञानी ये चार प्रकार के भक्त कहे गये है ।[1] आरम्भ में नामदेव आर्तभक्त थे उनकी जिज्ञासा का समाधान ज्ञानेश्वर व गुरु विसोबा खेचर द्वारा हुआ । गुरु की शरण में ही आने से जिज्ञासा का समाधान होता है । ज्ञानी भक्त ज्ञानेश्वर की प्रेरणा ने उन्हें "ज्ञानी ज्ञानदेव ध्यानी नामदेव" से आगे बढ़ाकर ज्ञानी की उच्च कोटि में पहुँचा दिया ।

कीर्तन परम्परा के प्रवर्तक

कीर्तन परम्परा के प्रवर्तक नामदेव माने जाते हैं । महाराष्ट्रीय वारकरियों ने नवधा भक्ति के श्रवण और कीर्तन को अधिक प्राधान्य दिया । नामदेव इसके प्रथम आचार्य माने जाते हैं । वे जनता के मध्य खड़े होकर ताल और मृदंग के साथ कीर्तन करते और पुराणों से उदाहरण दे देकर अपने अभंगों की व्याख्या करते हैं । कहा जाता है कि उनके अभंगों में सभी सन्त ज्ञानदेव, निवृत्तिनाथ आदि सम्मिलित होते थे । नामदेव की इस कीर्तन पद्धति का आज भी महाराष्ट्र के गाँवों-गाँवों में प्रभाव है । इसे "निरूपण" भी कहते हैं ।[2] इस कीर्तन के रंग में नाचते हुए वे उत्तर भारत की दूसरी तीर्थ यात्रा पर निकले ।[3]

नाचू कीर्तनाचे रंगी, ज्ञानदीप लावू जगीं

पहली तीर्थ यात्रा से लौटने के कुछ दिवसोपरान्त सन्त ज्ञानेश्वर व सन्तमंडली के ज्येष्ठ व श्रेष्ठ सन्त निवृत्ति, सोपान व मुक्ताबाई के एक के बाद एक के समाधि लेने से सन्त नामदेव का मन दक्षिण से उचट गया । अतः

- -

1. चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।
   आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ।। - भगवद्गीता - अध्याय-7/16
2. डा॰ विनयमोहन शर्मा - हिन्दी को मराठी सन्तों की देन - पृ॰ 76
3. नाचू कीर्तनाचे रंगी, ज्ञानदीप लावू जगीं ।
   नामदेव गाथा - अभंग 1494

नामदेव ज्ञानेश्वर प्रवर्तित भागवत धर्म की पताका लिये नामभक्ति प्रचारार्थ कीर्तन के रंग में नाचते हुए, जग भर में ज्ञानदीप प्रज्ज्वलित करने के संकल्प से तीर्थयात्रा के लिए निकले । यह उनकी द्वितीय तीर्थयात्रा कहलाती है । हरिद्वार में कुछ समय रहकर घूमते-घूमते गुरुदासपुर के घोमान ग्राम में रहने लगे । वारकरी सम्प्रदाय के प्रचारक के रूप में अपने जीवन के अन्तिम बीस वर्ष पंजाब में बिताये । उसी अवधि में वहाँ की जनभाषा हिन्दी के माध्यम से अपने विचारों का प्रसार करने के लिए "पद" लिखे, उनकी कुछ्रीं रचनाओं को आगे चलकर सिक्खो, के "गुरु ग्रन्थसाहिब" में संकलित किया गया । पर प्रान्तीय नाभादास, अनन्तदास ने उनका चरित्र अपनी भाषा में लिखा । हिन्दी के परवर्ती सन्त कवियों ने उनकी प्रवर्तित परम्परा को अपनाया ।

पंजाब के गुरुदासपुर जिले के घोमान गाँव में अब भी बाबा नामदेव का एक प्राचीन मन्दिर है,जहाँ उनकी चरण पादुका का पूजन किया जाता है । यहाँ उनके अनेक शिष्य बने जिनमें विष्णुस्वामी,बहोरदास, जाल्हो सुनार व लड्ढा प्रमुख हैं । पंजाब, राजपूताना, बिहार में अभी बाबा नामदेव सम्प्रदाय के अनुयायी है । घोमान में उनका सुप्रसिद्ध मन्दिर ही उनके कार्य व श्रेष्ठत्व की साक्षी दे रहा है ।[1]

नामदेव की समाधि

परम्परागत विश्वास के अनुसार नामदेव ने भी ज्ञानदेव की भाँति समाधि ली । 1. घुमान 2. पंढरपुर व 3. नरसी में उनकी समाधियाँ हैं ।

नामदेव के शिष्य परिसा भागवत के साक्ष्य से पंढरपुर में समाधि की पुष्टि होती है ।[2] और आज भी पंढरपुर में विठ्ठल मन्दिर के महाद्वार पर

- -

1. श्री शं.पु. जोशी - पंजाबातील नामदेव - पृ. 44 से 52 तक
2. आषाढ शुक्ल एकादशी । नामा विनवी विठ्ठलाशी
   आम्हा आवडी हो मजसी । समाधि विश्रान्ति लाभी ।
   सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली - पृ. 39

नामदेव की पंढरी है यहीं उनकी समाधि है । डा॰ माधवगोपाल देशमुख के मत में पंढरपुर में उनकी देह समाधि व घुमान में उनकी वस्त्र समाधि या स्मारक है ।[1] पर डा॰ भागीरथ मिश्र के मत में प्रचलित जनश्रुति के आधार पर नामदेव ने घुमान में ही समाधि ली होगी क्योंकि महाराष्ट्र में नामदेव के अन्तिमकाल का कोई विवरण प्राप्त नहीं होता और जीवन के अन्तिम समय में पंढरपुर आकर समाधि लेना संगत नहीं लगता । उनके विचार में घुमान में ही समाधि लेना अधिक सम्भव है । बाद में उनकी किसी शिष्य द्वारा अस्थियों या फूलों को पंढरपुर में लाकर समाधि बनाई गई होगी ।[2] हमें भी डा॰ मिश्र का मत इसीलिए समीचीन प्रतीत होता है क्यों कि उन दिनों यात्रा की कठिनाइयों को सहन करते हुए 80 वर्ष की आयु में पंजाब से पंढरपुर जाना संगत नहीं लगता ।

इन्हीं नामदेव के परवर्ती थे सन्त कबीर ।

कबीर - व्यक्तित्व

सन्त कबीर ऐसे दीपवाहक थे जो अपने को छाया में रखकर संसार को ज्ञानदीप से प्रकाशित करते थे । गुरु की कृपा व जयदेव व नामदेव की भक्ति से प्रेरित कबीर के जीवन वृत्त के सम्बन्ध में तथ्यपूर्ण ज्ञान न होने से जनश्रुतियों व बहिःसाक्ष्य के आधार पर उनके जीवन का इतिहास तैयार किया गया है । फिर भी उनके दोहे, साखियों व पदों में यत्र-तत्र बिखरी हुई पंक्तियाँ अंतःसाक्ष्य का आधार बनी है ।

जन्म काल - स्थान

गत अध्याय में सन्त कबीर के काल पर विचार करते हुए हमने उनकी जन्मतिथि संवत् 1455 ‖ सन् 1398 ‖ निर्धारित की है । जनश्रुति के

1॰ नामदेव - पृ॰ 58
2॰ डा० मिश्र व मौर्य सम्पादित - सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली - भूमिका - पृ॰ 39

अनुसार सन्त कबीर नीमा और नीरू नामक मुस्लिम जुलाहा दम्पति के पोष्य पुत्र थे।

> पहिले दरसन मगहर पायो पुनि काशी बसे आई।
> सगल जनम सिवपुरी गवाइआ।[1]

इन पंक्तियों से जन्मस्थान मगहर व निवास स्थान धार्मिक नगरी काशी माना जाता है।

<u>जाति जुलाहा नाम कबीरा</u>

"जाति जुलाहा नाम कबीरा" ऐसी जाति सूचक अनेक पंक्तियों के अन्तःसाक्ष्य से कबीर जाति से जुलाहे सिद्ध होते हैं।[2] कबीर ने कोरी, जुलाहा, योगी या जोगी शब्दों द्वारा भी जाति निर्देश किया है।[3] डा॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इन तीनों की विशद व पाण्डित्यपूर्ण शोध कर निष्कर्ष रूप में लिखा है कि - "कबीरदास जिस जुलाहा वंश में पालित हुए थे वह इसी प्रकार के नाथमतावलंबी गृहस्थ योगियों का मुसलमानी रूप था।[4]

उस समय, ऐसी जातियाँ समाज में हीन समझी जाती थीं अतः कबीर ने उसे नीच[5] व उपहास्य[6] की जाति कहा है।

---

1. डा॰ रामकुमार वर्मा - सन्त कबीर - पृ॰ 17
2. I. जाति जुलाहा मति को धीर।
   II. मेरे नाम की अंमद नगरी, कहै कबीर जुलाहा
   III. तू ब्राह्मण मैं काशी का जुलाहा
3. I. हरि को नाम अंमृत कहै कबीरा कोरी
   II. जाति जुलाहा नाम कबीरा।
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी - कबीर - पृ॰ 26
5. आइ हमारे कहा करोगी, हम तो जाति कमीना
6. कबीर मेरी जाति को सब कोइ हसनेहार -
   डा॰ रामकुमार वर्मा - सन्त कबीर - सा॰ 2

कबीर के ऊपर नाथमत के प्रभाव को देखते हुए यह स्वीकार करना पड़ता है कि ऐसी ही नाथमतावलम्बी मुसलमान जुलाहा जाति के थे । अतः उन्हें वंशपरम्परा से ही नाथमत का विचारधन सहज ही प्राप्त हुआ ।

कहै कबीर दुविधा मिटी, गुरु मिलिया रामानन्द

इसके अतिरिक्त "काशी में हम प्रगट भये हैं रामनन्द चेताए" जनश्रुति पर आधारित इन पंक्तियों के अनुसार कबीर के गुरु रामानन्द माने जाते हैं । डा॰ रामकुमार वर्मा ने वेलनदास कृत प्रसंग पारिजात, भक्तमाल (पद-31) में वर्णित रामानन्द की शिष्य परम्परा व प्रियादास की टीका के आधार पर कबीर को रामानन्द का ही शिष्य माना है ।[1]

डा॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी मध्य युग की सम्पूर्ण स्वाधीन चिन्ता के गुरु रामानन्द को ही कबीर का गुरु मानते हैं ।[2] इस सद्गुरु के प्रताप को कबीर ने स्वयं स्वीकार किया है ।[3]

जनश्रुति व कबीर पंक्तियों की मान्यता के अनुसार रामानन्द को गुरु बनाने की घटना का उल्लेख आ॰ रामचन्द्र शुक्ल व डा॰ रामकुमार वर्मा ने इस प्रकार किया है । कहते हैं कि कबीर निगुरा होने से लोगों में आदर के पात्र नहीं थे उनके भजनों व उपदेशों को लोग सुनना नहीं चाहते थे अतः उन्होंने अपने फुफेरे रामानन्द को गुरु बनाना चाहा । पर मुसलमान होने के कारण वे सहज ही रामानन्द द्वारा स्वीकृत नहीं किये गये । आगे उनकी दृढ़ इच्छा-शक्ति के बल पर वे रोज ब्राह्म मुहूर्त में स्वामी रामानन्द के दर्शन के लिए जाते

1॰ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - 242-244

2॰ हिन्दी साहित्य की भूमिका - पृ॰ 54

3॰ सद्गुरु के परताप ते मिटि गयो सब दुःख दंद
कहै कबीर दुविधा मिटी, गुरु मिलिया रामानन्द
(सं॰क॰सा॰ 1/8) कबीर - पृ॰ 150

थे । एक दिन अन्धेरे में गंगा स्नान से लौटते हुए स्वामी रामानन्द का पैर कबीर पर पड़ा, तब उनके पैरों में लेटकर कबीर ने राममन्त्र की दीक्षा ली । तब से वे स्वामी रामानन्द के शिष्य बने ।[1]

कबीर की वाणियों में वैष्णव प्रभाव भी उन्हें रामानन्द का शिष्य सिद्ध करता है । उनके समकालीन सन्तों में रैदास शिष्य धर्मदास ने भी रामानन्द को ही कबीर का गुरु माना है ।

"घट-घट अविनाशी सुनहु तकी तुम शेख" के आधार पर कुछ विद्वान उन्हें शेख तकी के मुरीद मानते हैं ।[2] आचार्य शुक्ल ने पुष्ट प्रमाणों के अभाव में इसका खंडन किया है । इन पंक्तियों में कबीर ही शेखतकी को अपनी बात सुनाते हुए जान पड़ते हैं । अत: शेखतकी को उनका गुरु नहीं माना जा सकता ।[3] "कहु कबीर मैं सो गुरु पाइया जाका नाम त्रिलोक रे" इस उक्ति के आधार पर कुछ विद्वानों ने कबीर का कोई भी मानव गुरु नहीं था । रामानन्द मानस गुरु थे । इस नवीन मत की उद्भावना की[4] पर डा॰ रामकुमार वर्मा ने उनके मानव गुरु रामानन्द को ही सिद्ध करते हुए इसका खंडन किया है ।[5] कबीर की

1॰ आ॰ रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ॰ 77
2॰ डा॰ जी॰ एच॰ वेस्टकाट - कबीर एंड दि कबीर पंथ - पृ॰ 25
3॰ हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ॰ 78
4॰ 1॰ डा॰ मोहनसिंह - कबीर एण्ड हिज बायोग्राफी - पृ॰ 24
   2॰ डा॰ भाण्डारकर - वैष्णविज्म व शैविज्म व अन्य मत - पृ॰
   3॰ डा॰ सुदर्शनसिंह मजीठिया - सन्त साहित्य - पृ॰ 210
5॰ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - पृ॰ 244

सम्पूर्ण विचारधारा रामानन्द से प्रभावित होने से अधिकांश विद्वान रामानन्द को ही इनका गुरु मानते हैं ।[1] अतः उनके दीक्षा गुरु रामानन्द ही हो सकते हैं ।

"विद्या न पढ़ूं वाद नहिं जानूं व मसि कागद छुओ नहि" के आधार पर यह स्पष्ट है कि इनका कोई विद्या गुरु नहीं था । उन्होंने रामानन्द को ही अपना आध्यात्मिक गुरु मान लिया था। वे सत्य की खोज के लिए देश भर पर्यटन करते रहे क्योंकि "सन्त जन ही कबीर के तीर्थ थे और सत्संग ही तीर्थ यात्रा, पर उनका ज्ञान सत्संग व आत्मानुभव पर ही आधारित नहीं था अपितु कुल परम्परा और कुल गुरु परम्परा से प्राप्त हुआ था । डा॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी ने स्पष्ट लिखा है कि "उनका ज्ञान सत्संग करके बटोरा हुआ नहीं था । वस्तुतः योग मत, वैराग्य विलक्षण परमात्म विश्वास, निर्गुण निराकार की भावना, समाधि, सहजावस्था, ध्यान आदि का सम्पूर्ण ज्ञान उन्हें अपनी कुल परम्परा व कुल गुरु परम्परा से प्राप्त हुआ था ।"[2] और उनके कुल गुरु रामानन्द ही थे । वैष्णव धर्म से अपने घनिष्ट सम्बन्ध को कबीर ने स्वयं स्वीकार किया है ।

मेरे संगी दोइ जणां, एक वैष्णो एक राम ।
वो है दाता मुक्ति का, वो सुमिरावै नाम ।।[3]

कबीर की इस वैष्णव भक्ति के प्रेरणा स्रोत जयदेव व नामदेव होने से[4] यह अनुमान करना असंगत न होगा कि उन्हें नामदेव के जीवन की गुरु बनाने सम्बन्धी घटना से ही गुरु बनाने की प्रेरणा मिली हो । वे इस घटना से अवश्य परिचित

1· 1· आचार्य रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ॰ 77
2· डा॰ हजारीप्रसाद द्विवेदी - कबीर - पृ॰ 151
3· डा॰ सरनामसिंह शर्मा - कबीर एक विवेचन - पृ॰ 62
4· डा॰ त्रिगुणायत - कबीर की विचारधारा - पृ॰ 47
2· कबीर - पृ॰ 142
3· कबीर ग्रन्थावली - पृ॰ 49
4· गुरुसंगती जैदेव नामा भगति के प्रेम इन्हहि जाना ।
गुरु ग्रन्थ साहब - 330 वे. को. ग्रन्था - पृ. 328.

होंगे और "गुरु बिन चेला ज्ञान न लेहे" इस विश्वास के अनुसार युग पुरुष महान् भक्त रामानन्द को गुरु बनाया होगा ।

गृहस्थ सन्त

कबीर ने सांसारिक कर्त्तव्यों का पालन करते हुए भगवद्भक्ति की । इनकी नारी निन्दा सम्बन्धी उक्तियों के आधार पर कबीर पंथी इन्हें अविवाहित मानते है पर उनके अन्तः साक्ष्य से उनके पाँच प्राणियों के परिवार की पुष्टि होती है । वे संसारी पुत्रवान थे ।[1] वे एक गृहस्थ सन्त थे, सन्यासी, योगी या वैरागी नहीं । संसार में रहकर उन्होंने साधना की थी । पद्मपत्रमिवाम्भसा विरक्त भाव से वे गृहस्थी चला रहे थे ।

वे मस्तमौला सन्त थे । राम नाम की धुन में कभी अपने पैतृक व्यवसाय के प्रति अरुचि दिखाते हैं ।[2]

घुमक्कड़ साधु

कबीर ने देश-विदेश की यात्रा की थी । आचार्य क्षितिमोहन सेन ने उनकी गुजरात यात्रा का वर्णन किया है । दक्षिण में पंढरपुर की यात्रा की पुष्टि "हिस्ट्री आफ मराठा पीपल्स" से होती है । वे हज व काबा भी गये।[3] ज्ञानार्जन की इच्छा, सत्संग व सत्य प्रचार हेतु समस्त भारत का पर्यटन किया । उनकी सधुक्कड़ी भाषा ही उनके घुमक्कड़ साधु के रूप की परिचायक है, उनके पर्यटन की द्योतक है । उनके द्वारा प्रयुक्त सधुक्कड़ी भाषा भी इसका प्रमाण है ।

- -

1. बूड़ा बंश कबीर का उपजा पूत कमाल । – आदिग्रन्थ – पृ. 738
2. तनना बुनना सबु, तजिओ है कबीर ।
   हरि का नामु लिखिलिओ सरीर ।।
   डा॰ रामकुमार वर्मा – सन्त कबीर – पृ॰ 129
3. कबीर हज काबे होइ, गइआ केती बार कबीर ।
   डा॰ रामकुमार वर्मा – सन्त कबीर – पृ॰ 277

नामदेव कृतित्व

"शतकोटि तुझे करीन अभंग" भक्ति के आवेश में 100 कोटि अभंग-रचना की प्रतिज्ञा करनेवाले सन्त नामदेव के आज लगभग 2500 मराठी अभंग उपलब्ध है । इस प्रतिज्ञा से निस्सन्देह यह मान्य करना पड़ता है कि नामदेव ने अवश्य ही अनेक अभंगों की रचना की होगी ।

नामदेव मूलतः मराठी के कवि होने पर भी उन्होंने हिन्दी में भी लिखा । अभी तक उनके 230 हिन्दी पद व 15 साखियाँ उपलब्ध हो सकी है ।

यद्यपि नामदेव द्वारा स्वहस्तलिखित ग्रन्थ की प्राप्ति दुष्प्राप्य व असम्भव है पर परम्परा द्वारा सुरक्षित नामदेव का साहित्य मुद्रित व अमुद्रित दोनों रूपों में प्राप्त होता है । मुद्रित प्रतियों में शरत, जोग, आवटे व सुबन्धु प्रतियों के अतिरिक्त अन्य छोटे-छोटे संग्रह ग्रन्थ भी मिलते हैं इनमें उनकी मराठी व हिन्दी दोनों ही रचनाओं का समावेश है ।

नामदेव गाथा की उपलब्ध मुद्रित प्रतियाँ

1. "नामदेवांची आणि त्यांच्या कुटुम्बातील व समकालीन साधुंच्या अभंगांची गाथा" -- सम्पादक - तुकाराम तात्या शरत - शके -1894 - तत्व विवेचक प्रेस, बम्बई - इसमें नामदेव के मराठी अभंगों की संख्या 2548 में से गुरु ग्रन्थ साहब से संकलित 40 पदों और 106 हिन्दी पदों का रागों के निर्देश सहित संग्रह हैं ।

2. "नामदेवांची गाथा" -- संशोधक - श्री रा.श्री गोंधळेकर व पांडुरंग विनायक गोडबोले आवृत्ति पहिली शके 1814 में नामदेव की अभंग संख्या 1574 है ।

3. "नामदेवाचा गाथा" सम्पादक श्री विष्णु नरसिंह "जोग" – आवृत्ति पहिली शके 1847 चित्रशाला प्रेस, पूना – इसमें मराठी अभंग 2371 व हिन्दी के 102 पद संकलित है । पर हिन्दी पदों का रागों द्वारा निर्देश नहीं ।

4. श्री नामदेव महाराज यांच्या अभंगाची गाथा" श्री त्र्यंबक हरी आवटे – पुणे – शके 1830 इन्दिरा प्रकाशन प्रेस, पूना । इसमें नामदेव के 2375 मराठी अभंग व 102 हिन्दी पद "हिन्दुस्तानी पदें" शीर्षक के अन्तर्गत संगृहीत हैं । इसमें भी हिन्दी पदों के रागों का उल्लेख नहीं ।

5. "नामदेवरायाची सार्थ गाथा" -- संपादक व प्रकाशक – के. प्रह्लाद सीताराम सुर्वे यह 6 भागों में सन् 1949 से 1962 तक प्रकाशित हुई । इसके पाचवे भाग (1960) में गुरु ग्रन्थ साहब के 61 पद हैं ।

6. "सकल सन्त गाथा" -- इसकी प्रथम आवृत्ति सन् 1923 में श्री नामदेवांचे अभंग तथा द्वितीय आवृत्ति में "श्री निवृत्तिनाथ, ज्ञानेश्वर सोपान, मुक्ताबाई आणि इतर गाथा" नाम से सन् 1967 में प्रकाशित हुई । इसके सम्पादक काशीनाथ अनन्त जोशी – प्रकाशक – रमेश शंकर आवटे – पुणे हैं । इसमें नामदेव के चरित्र के साथ नामदेव के मराठी अभंग 2373 व 102 हिन्दी पद है । यह आधुनिक काल का प्रथम उपलब्ध संग्रह माना जा सकता है ।

7. "नामदेव गाथा" -- सन्त नामदेव की सप्तम जन्म शताब्दी के अवसर पर सन् 1970 में महाराष्ट्र शासन द्वारा प्रकाशित "नामदेव गाथा" को अभी तक उपलब्ध गाथाओं में अधिकृत व प्रामाणिक माना जा सकता है । इसका सम्पादन "नामदेव गाथा समिति" द्वारा 5 मुद्रित प्रतियों तथा 30 हस्तलिखित प्रतियों के आधार किया गया ।[1] इसमें नामदेव के मराठी अभंग 2107 व कुछ

- -

1. नामदेव गाथा – महाराष्ट्र शासन प्रकाशन – पृ. 3

अप्रकाशित अभंग व दूसरी तीर्थावली का पहली बार प्रकाशन हुआ है । नाम साम्यता के कारण इसमें अन्य नामदेवों की रचना के मेल की सम्भावना है । वैज्ञानिक दृष्टि से पाठ निर्धारण व नामदेव के पदों की छानबीन में अभी अधिक शोध की आवश्यकता है ।

नामदेव गाथा समिति की हस्तलिखित प्रतियों में हिन्दी के केवल 18 पद ही मिले हैं ।[1] अतः डा॰ मिश्र व मौर्य द्वारा सम्पादित "सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली" के 230 हिन्दी पदों को यथातथ्य संकलित किया गया है । यद्यपि मुद्रित साम्प्रदायिक गाथाओं में नामदेव के 102 हिन्दी पद प्राप्य है ।

8॰ सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली

सन् 1964 में डा॰ भगीरथ मिश्र व डा॰ राजनारायण मौर्य द्वारा सम्पादित इस पदावली का प्रकाशन पूना विश्वविद्यालय द्वारा हुआ । इसमें 230 हिन्दी पद [रागों के निर्देश सहित] तथा 13 साखियों को एक स्थल पर संकलित करने का प्रथम प्रयास स्तुत्य है । इस पदावली के 165 पदों में राग टोडी के 47 पद, राग गोंड के 22 पद, सोरठि के 6, गौडी के 7 पद, माली गौडी के 5, रामगिरी के 18 तथा आसावरी के 4, बसन्त के 5 व भैरु राग के 16 पद व कन्हडो के 4, सारंग के 2 तथा धनाश्री के 26 पद ; राग मारु कफारधी, राग पर जीवी कल्याण के 1,1 पद है । इस प्रकार इसमें 16 राग-रागिनियाँ प्रयुक्त है । डा॰ मिश्र के मत में नामदेव के पदों में रागों के क्रम का विभिन्न प्रतियों में साम्य देखते हुए यह अनुमान करना उचित होगा कि स्वयं नामदेव ने ही रागों का निर्देश कर दिया होगा अथवा नामदेव के पश्चात् उनके शिष्यों द्वारा भी रागों में विभाजित करने की सम्भावना व्यक्त की है।[2]

1॰ नामदेव गाथा - प्रस्तावना - पृ॰ 2
2॰ सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली - पृ॰ 63

इस पदावली का सम्पादन तीन परम्पराओं मराठी गाथा की 4 प्रतियाँ तथा गुरु ग्रन्थ साहब की 5 प्रतियाँ तथा उत्तर भारत के सन्तों की 10 हस्तलिखित पोथियों की परम्परा से प्राप्त सामग्री के आधार पर किया गया है । इसमें डा० मिश्र ने पंढरपुर की प्रति को अधिक प्रामाणिक माना है।[1]

प्रस्तुत अध्ययन के लिए नामदेव गाथा 1970 तथा सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली को ही आधार बनाया है ।

वर्ण्य विषय

नामदेव के मराठी व हिन्दी साहित्य का अध्ययन करने से कह सकते हैं कि उनके काव्य में आध्यात्मिक विचारों की प्रधानता है । रचना शैली की दृष्टि से उनका मराठी काव्य अभंग, गोळ्ही व आख्यान है ।

हस्तलिखित गाथा प्रतियों में विषय सूची न होने पर नामदेव के मराठी अभंग सभी गाथा संग्रहों में विषयों की सूची सहित प्रकाशित किये गये हैं । नामदेव गाथा (1970) में सभी प्रतियों से भिन्न विषय सूची के अनुसार संग्रह किया गया है । उसमें भी विठ्ठल माहात्म्य, भक्तवत्सलता, नाममहिमा, सन्त महिमा, आत्मशुद्धि विषयी वार्तोद्गार, आत्मनिवेदन और आत्मज्ञान उपदेश आदि शीर्षकों के अन्तर्गत संगृहीत अभंगों में उनके दार्शनिक विचारों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है । इसके अतिरिक्त अभंग आत्मचरित्र, सन्त चरित्र तथा ज्ञानेश्वर चरित्र आदि भी लिखे हैं ।

हिन्दी पदों का वर्ण्य विषय

यद्यपि सन्त नामदेव के हिन्दी पदों का विषयानुसार विभाजन किसी भी संग्रह ग्रन्थ में नहीं किया गया । सम्भवतः पदों में एक साथ कई विषयों की अभिव्यक्ति के कारण पदों का विषयानुसार वर्गीकृत करना साधी के

- -

1. सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली - पाठ सम्पादन - पृ० 41-59

समान सुविधाजनक नहीं । कबीर के पदों का भी विषयानुसार वर्गीकरण नहीं, अपितु रागों के अनुसार है ।

नामदेव के हिन्दी काव्य में मुख्यतः निम्न विषयों का प्रतिपादन हुआ है उन प्रवृत्तियों को निम्न प्रकारेण वर्गीकृत कर सकते हैं ।

1. अद्वैतवाद व सर्वात्मवाद

नामदेव के अनेक पदों में निर्गुण ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन हुआ है । इन पदों द्वारा उनके परमतत्व, जीव, जगत् मोक्ष, माया सम्बन्धी दार्शनिक धारणा का पता चलता है ।[1] उनके काव्य की अनेक पंक्तियाँ वेदान्त सूत्रों का भावानुवाद सी प्रतीत होती है । इन दोनों वादों की दृढ़ भूमिका पर उनके दार्शनिक विचार आधारित है । इस पर आगामी पृष्ठों में विस्तृत विवेचन किया है ।

2. निर्गुण भक्ति भावना

नामदेव का विश्वास है कि अद्वैत की सच्ची अनुभूति भक्ति द्वारा सम्भव है । वे अद्वैत और भक्ति में समन्वय मानते हैं अतः नामदेव ने निर्गुण व सगुण की एकता का समर्थन करते हुए निर्गुण भक्ति का प्रतिपादन किया है और उनकी साधना का मूल स्वर ही भक्ति है । भक्ति में सेव्य सेवक भाव को विशेष महत्व दिया है ।

3. नाम-महिमा

नामदेव के आधे से अधिक हिन्दी पदों में नाम-माहात्म्यगान है। सन्त नाम संकीर्तन को ही जीवन का ध्येय मानते थे अतः सभी सन्तों ने नाम साधना पर अधिक बल दिया है । कलियुग में नाम साधना ही सहज साधना है वे नामोच्चार को उत्तम धर्म मानते है क्योंकि उसीसे सब धर्मों का नाश

- -

1. सं॰ना॰ हि॰ प॰ 9 के पद 6, 12, 14-36,39,40,42,43,45,47 52,53,57,71,72,73,74,84,100,110,130,135

होता है ।[1] नामदेव के परवर्ती कबीर, दादू, रैदास, सहजोबाई सभी ने नामोपासना को प्रधानता दी है ।

4. गुरु व सन्त महिमा

नामदेव गुरु कृपा की आवश्यकता को अनुभव करते हैं क्योंकि गुरु के अनुग्रह से ही भवसागर पार कर सकते हैं । अतः नामदेव ने अनेक स्थलों पर गुरु महिमा का वर्णन किया है । गुरु महिमा सम्बन्धी उनका एक दीर्घ पद दृष्टव्य है ।[2]

सत्संगति के महत्व का वर्णन करते हुए उन्होंने सन्त महिमा का भी गान किया है ।

5. योग साधना

नामदेव के कई पदों में इडा, पिंगला, सुषुम्ना का संयमन व अनाहत नाद, उन्मनी अवस्था, शून्य समाधि की चर्चा हुई है ।[3]

6. बाह्याडम्बरों का विरोध

सभी सन्तों की भांति भक्ति के क्षेत्र में जाति पांति को निरर्थक बताते हुए नामदेव ने व्रत, तीर्थ, पूजा, नमाज आदि बाह्याडम्बरों का विरोध किया है । सदाचरण पर बल दिया है ।

7. रहस्य-भावना

उनकी रचनाओं में रहस्य भावना की अभिव्यक्ति दाम्पत्य

---

1. भजनालीला नामदेव हृ. 108 व. स. मो. हि. प. - पद 206
2. सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली - पद - 219
3. वही - पद - 66, 67, 76, 97, 98, 99, 112 आदि पद दृष्टव्य ।

प्रतीकों से हुई है ।

मैं बोरी मेरा भरतार ।[1]

8. अनन्य प्रेम-भावना

नामदेव प्रेमवादी सन्त थे अतः उन्होंने साधना में प्रेमतत्व को प्रधानता दी है । उन्हें राम व नाम अनन्य भाव से प्रिय है ।[2] यही अनन्य प्रेम भावना उनकी आस्था है ।

सक्षेप में नामदेव का काव्य आध्यात्मिकता प्रधान है ।

कबीर कृतित्व

"मसि कागद छुवो नहि" से यह स्पष्ट है कि कबीर ने स्वयं अपनी रचनाएं नहीं लिखी । उनके उपदेश मौखिक हुआ करते थे, उनकी वाणियों को उनके शिष्यों ने लिपिबद्ध किया ।

कबीर के नाम से प्रचलित वाणियां अनन्तहैं क्योंकि कबीरपन्थी भी सद्गुरु की वाणी को अनन्त कहते हैं । आज कबीर- वाणियों के मुख्य निम्न संकलन प्राप्य हैं ।

कबीर वाणी के मुद्रित संकलन

1. कबीर ग्रन्थावली

सर्वप्रथम श्री श्यामसुन्दर दास जी ने संवत् 1987 में कबीर की रचनाओं का सम्पादन संवत् 1561 तथा संवत् 1881 की लिखी दो हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर किया ।[3] इसमें 59 अंगों [विषयों] में वर्गीकृत

1. सन्त नामदेव की हिन्दी पदावली - पद - 214
2. वही - पद 19, 57
3. डा. श्यामसुन्दरदास - कबीर ग्रन्थावली - पृ. ।

809 साखियाँ, रागों से अभिहित 403 पद, 7 रमैनियाँ व परिशिष्ट में गुरुग्रन्थ-साहब के 192 साखियाँ व 222 पद भी संगृहीत हैं ।

2. सन्त कबीर

यह द्वितीय उल्लेखनीय संग्रह डा. रामकुमार वर्मा द्वारा संवत् 2000 (सं. 1943) में गुरु ग्रन्थ साहब के आधार पर किया गया है । डा. त्रिगुणायत भी कबीर ग्रन्थावली की अपेक्षा "सन्त कबीर" को अधिक प्रामाणिक मानते हैं । इसमें 243 साखियाँ तथा 228 पद (सबद) हैं । इसमें रमैनियों को छोड़ दिया गया है । इसमें संगृहीत पदों और साखियों को कबीर का सम्पूर्ण साहित्य नहीं माना जा सकता है ।

3. कबीर वचनावली

कबीर की वाणियों का यह तृतीय संकलन श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय द्वारा सन् X में किया गया । इसके प्रथम खंड में दोहावली व द्वितीय खंड में शब्दावली को विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत विभाजित कर संगृहीत है । इसे डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने सबसे अच्छा सुसम्पादित संस्करण माना है ।[1]

4. कबीर के पद

डा. श्री क्षितिमोहन सेन ने मौखिक परम्परा से चले आते हुए लोक प्रचलित कबीर की 100 वाणियों का यह संग्रह साधुओं, भक्तों के मुख से सुनकर किया है । ये कविताएँ मुख्यत: परिचमी विद्वानों की दृष्टि से संगृहीत की गई है । महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने स्वयं इन पदों का अंग्रेजी अनुवाद किया । डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इन्हें "कबीर" पुस्तक के परिशिष्ट 2 में संकलित किया है ।

---

1. डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी - कबीर - पृ. 34

5. कबीर ग्रन्थावली

डा॰ पारसनाथ तिवारी ने सन् 1961 में कबीर की वाणी का पाठ निर्धारण व प्रामाणिक रचना संकलन की दृष्टि से सम्पादन किया। उन्हें कबीर के नाम से कुल 1600 पद, 4500 साखियाँ व 134 रमैनियाँ मुद्रित व हस्तलिखित प्रतियों में प्राप्त हुई।[1] इस प्रचुर सामग्री का सावधानी व सतर्कता से अध्ययन कर डा॰ तिवारी ने निष्कर्ष रूप में 200 पदों, 20 रमैनियों, एक चौंतीसी रमैनी और 744 साखियों, इन को प्रामाणिक रूप में कबीर की कृति माना है।

वैज्ञानिक स्वरूप निर्धारण की दृष्टि से डा॰ माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित कबीर ग्रन्थावली भी उल्लेखनीय है।

6. कबीर बीजक

कबीर पन्थियों में वेद रूप में मान्यता प्राप्त इस ग्रन्थ में कबीर पंथ के दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन हुआ है। यह मूल रूप में अप्राप्य है पर इसके कई संस्करण निकल चुके हैं। इनमें "भगताही" बीजक प्रामाणिक माना जाता है। बीजक के प्रायः सभी संस्करणों में 84 रमैनियाँ, 115 शब्द काव्यरूप[2] व 353 साखियों के अतिरिक्त लोक साहित्य के चौंतीसा एक। विप्रमतीसी, 1 कहरा, 12 बसन्त, 2 बेलि, 1 बिरहुली, 3 हिंडोला आदि संगृहीत हैं।[3] डा॰ हजारीप्रसाद द्विवेदी ने बीजक के शब्द और साखियों को अधिक प्रामाणिक माना है। बीजक में रमैनियाँ चौपाई छन्दों में व अन्त में साखी उद्धृत है। बीजक की अपनी ग्रन्थन शैली व अपनी परम्परा है।

वैसे कबीर के नाम से विपुल रचनाएं प्रसिद्ध है। विल्सन ने 8 ग्रन्थों को, वेस्टकाट ने 82, मिश्र बन्धुओं ने 75, डा॰ वर्मा ने 61,

---

1. डा॰ पारसनाथ तिवारी – कबीर ग्रन्थावली – पृ॰ 3
2. डा॰ ह॰द्विवेदी – कबीर – पृ॰ 32
3. डा॰ जयदेव सिंह व वासुदेव सिंह – कबीर वाङ्मय खंड-1 – पृ॰ 11

काशी नागरी प्रचारिणी सभा की रिपोर्टों के आधार पर 150 ग्रन्थ कबीर कृत माने हैं ।[1] डा॰ पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने 44 पुस्तकें कबीर-कृत मानी है । डा॰ एच॰ ई॰ की ने कबीर एण्ड हिज फालोअर्स में कबीर-कृत व कबीर पन्थी साहित्य को अलग अलग शीर्षकों में विभाजित किया है । आज विद्वानों द्वारा कबीर के नाम से उपलब्ध विशालकाय साहित्य में से कबीर कृतियों के प्रामाणिक विवेचन के प्रयास हो रहे है ।[2]

उपरोक्त स्रोतों में से प्रस्तुत अध्ययन का आधार डा॰ श्याम-सुंदर दास जी की "कबीर ग्रन्थावली" है ।

वर्ण्य-विषय

कबीर का प्रमुख साहित्य तीन रूपों में विभक्त है - साखी, शब्द या पद तथा रमैनी । प्राय: यह माना जाता है कि साखी में जीव, सबदी या पदों में ब्रह्म तथा रमैनी में जगत् सम्बन्धी विचार है ।

"साखी" शब्द संस्कृत के "साक्षी" का तद्भव रूप है । कबीर ने अपनी इन उक्तियों का शीर्षक "साखी" इसलिए दिया है क्योंकि उन्होंने इनमें वर्णित तथ्यों का स्वयं साक्षात्कार किया था । इस तरह कबीर द्वारा स्वानुभूत, स्वतंत्र आध्यात्मिक तथ्यों का वर्णन ही साखियों में हुआ है । अत: साखियों के विषय आध्यात्मिक व नैतिक हैं । इसमें मूलत: परमात्मा की भक्ति या प्रेम ही पाया जाता है ।

कबीर ने "शब्द" का प्रयोग दो भावों के लिए किया है । परमतत्व व 2 रा पद के अर्थ में ।[3] इन पदों में आत्मज्ञान की प्राप्ति, ब्रह्म जीव, माया, मोक्ष सम्बन्धी दार्शनिक विचारों की प्रधानता है । पदावली में ज्ञान और भक्ति का समन्वित रूप मिलता है ।

1॰ डा॰ रा॰ वर्मा - हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास -पृ॰ 250-256

2॰ डा॰ पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल -

3॰ डा॰ जयदेवसिंह, डा॰ वासुदेव सिंह - कबीर वाङ्मय खंड-1 पृ॰ 12

रमैनी का प्रयोग तीन अर्थों में हुआ है । पहला संसार में जीवों के रमण का विवेचन करनेवाली रचना अथवा वेदशास्त्र के विचारों में रमण करानेवाली या एक 28 मात्राओं का छन्द जिसके प्रत्येक चरण में 16 मात्राएं हो । रमैनी में मुख्य रूप से सृष्टि, जीव, और जगत् की स्थिति तथा साधनात्मक बातों पर गम्भीर रूप से विचार किया गया है ।[1] रमैनियों में कबीर एक दार्शनिक की भान्ति मूलतत्व का प्रतिपादन करते है । इस प्रकार रमैनियों में उनकी अविच्छिन्न व्यवस्थित विचारधारा मिलती है ।

अत: इस विवेचन के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि नामदेव और कबीर का काव्य आध्यात्मिकता प्रधान काव्य है । वे दोनों सन्त मूलत: भक्त कवि थे अत: उन्होंने आध्यात्मिक विचारों का प्रतिपादन दार्शनिकों की शुष्क शैली में नहीं अपितु भावुक भक्त की भाँति किया है ।

संकलन परम्परा

इस दृष्टि से इनकी रचनाओं का विश्लेषण करने पर सन्त वाणियाँ का संग्रह पदों और साखियों में मिलता है । अत: सन्तों के पदों को वाणी या बानी सबद या शब्द कहने की परम्परा है ।

हमें इन सन्तों की कृतियाँ मुख्यत: तीन परम्पराओं से उपलब्ध हुई है । 1• सन्त परम्परा 2• आदि ग्रन्थ की परम्परा व 3• पंथ परम्परा ।

सन्त परम्परा के संग्रह ग्रन्थ

सकल सन्त गाथा, सर्वांगी, भक्तमाल नामा, पंचवाणी आदि बड़े संग्रह ग्रन्थ व छोटे-छोटे लघु संग्रह ग्रन्थ इस परम्परा के अन्तर्गत आते हैं ।

1• डॉ• जयदेवसिंह, डॉ• वासुदेव सिंह - कबीर वाङ्मय खंड-1 पृ• 12

सकल सन्त गाथाओं की संख्या 300 से भी अधिक है, सभी भाषाओं के काव्य कृतियों के संग्रह का प्रयास इन गाथा संग्रहों द्वारा किया गया है पर इन संग्रहों से कवियों के पदों का संग्रह का काल व निश्चित आधार प्राप्त नहीं होता ।

इस परम्परा का दूसरा प्रधान "सर्वंगी" है जिसका संकलन सन्त दादूदयाल [संवत् 1601-1660] के जीवन काल में उनके शिष्य रज्जब द्वारा किया गया । इसमें लगभग 100 से अधिक सन्तों की रचनाएं हैं जिनमें कबीर और नामदेव दोनों की कृतियों का समावेश है पर इस संकलन का वैशिष्ट्य यह है कि इसमें साखियों का संग्रह विविध "अंगों" में हुआ है । अंगों के साथ राग भी दिये हैं । इससे यह प्रतीत होता है कि इससे पूर्व साखियों को विभिन्न अंगों या शीर्षकों में विभाजित करने की प्रथा नहीं थी । उसका प्रारम्भ सर्वंगी द्वारा ही हुआ होगा । पदों का विभाजन रागानुसार है । इसमें नामदेव के कुल 50 पद व कबीर के 336 रचनाएं [पद और साखियां] है । अंगानुसार विभाजन होने से ये पद समस्त पोथी में बिखरे हुए है ।

"पंचवाणी" में सन्त दादूदयाल, नामदेव, कबीरदास, हरिदास और रैदास इन पांच कवियों की वाणियों का संग्रह सर्वंगी की भांति ही हुआ है ।

इसके अतिरिक्त दादूपन्थी तथा निरंजन सम्प्रदाय के अनुयायियों द्वारा अनेक हस्तलिखित पोथियों में भी अन्य सन्त कवियों की रचनाओं के साथ सन्त नामदेव व कबीर दास जी की कृतियां भी सम्मिलित है ।

यह परम्परा निश्चित ही प्राचीन और विश्वसनीय मानी जा सकती है, क्योंकि इसी के आधार पर कबीर ग्रन्थावली का सम्पादन हुआ ।[1] नामदेव के सबसे अधिक पद इसी परम्परा द्वारा प्राप्त हुए । नामदेव की वाणी

---

1. डा॰ श्री परशुराम चतुर्वेदी - कबीर साहब की रचनाएं - (लेख) संकलित - कबीर - सम्पादित विजयेन्द्र स्नातक - पृ॰ 64

73

तथा अन्य सन्तों की वाणियों में नामदेव के कुल 136 पद व 8 साखियां है ।[1]

आदिग्रन्थ की परम्परा

"आदिग्रन्थ" या "गुरुग्रन्थसाहब" सन्त परम्परा का सर्वाधिक प्रामाणिक परिचयात्मक ग्रन्थ माना जाता है । सिक्खों के इस धार्मिक ग्रन्थ का सम्पादन सन् 1604 ई संवत् 1661 ई में सिक्खों के पाँचवें गुरु अर्जुन देव द्वारा किया गया ।

इस ग्रन्थ की विशेषता यह है कि इसमें सिक्खों के गुरुओं तथा उनकी विचारधारा से साम्य रखनेवाली व उनके विचारों की पुष्टि के लिए निर्गुणी सन्तों की रचनाएं संगृहीत है ।[2] इसमें संकलित साखियों का विभाजन अंगों में नहीं, अपितु पूर्ण संग्रह ही रागों के आधार पर किया गया है ।[3] इससे यह अनुमान किया जाता है कि साखियों का अंगो में वर्गीकरण करने की प्रथा बाद में चली होगी । इसमें जिन भक्त कवियों की रचनाएं है वे ईसा की 12 वीं शताब्दी के मध्य से 16 वीं शती के मध्य तक की विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते है । इनमें जयदेव, नामदेव, त्रिलोचन, रामानन्द, सदना, सेनी, पीपा सेन, कबीर, रैदास फरीद भीखन, सुरदास आदि हैं । इसमें नामदेव के 61 पद हैं ।

डा॰ रामकुमार वर्मा ने "सन्त कबीर" का सम्पादन गुरु ग्रन्थ साहब में प्राप्त कबीर के पदों के आधार पर किया ।

इस परम्परा के संग्रह ग्रन्थों का सन्त साहित्य के मूल्यांकन में प्रामाणिकता और भाषा की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है ।

1॰ डा॰ मिश्र व मार्य सम्पादित स॰ना॰हि॰प = पृ॰ 44
2॰ डा॰ जयराम मिश्र – श्री गुरु ग्रन्थदर्शन – पृ॰ 33
3॰ वही – पृ॰ 33-36

3. पंथ परम्परा द्वारा सुरक्षित साहित्य

प्रायः सभी सन्तों के अनुयायियों द्वारा पंथ स्थापित किये गये और उनके मठों में लिखित या मौखिक साहित्य की रक्षा के फलस्वरूप हमें सन्त कवियों का साहित्य उपलब्ध हो सका। नामदेव की साम्प्रदायिक गाथा, कबीर बीजक, सत्य कबीर की साखी, आचार्य क्षितिमोहन द्वारा सेन संगृहीत कबीर के 100 पद इसी परम्परा के अन्तर्गत हैं। इस परम्परा द्वारा सुरक्षित साहित्य में श्रद्धालु भक्तों द्वारा प्रक्षेपण की अधिक सम्भावना है।

सन्तों की संगीत परम्परा

इस संकलन परम्परा के अध्ययन से यह तथ्य उद्घाटित होता है कि सन्त कवियों के पदों का वर्गीकरण रागानुसार व साखियों का अंगानुसार हुआ है। सन्त नामदेव व सन्त कबीर के पद भी रागानुसार संगृहीत हैं। जिसमें प्राचीन संगीत परम्परा का ही निर्वहण हुआ है यह परम्परा पूर्ववर्ती सिद्ध साहित्य में और परवर्ती श्री गुरु-ग्रन्थ में उपलब्ध होती है।

भारतीय साधना में संगीत का सम्बन्ध नाद-ब्रह्म से रहा है। "ॐकार" इस नादब्रह्म का वाचक है और यही सम्पूर्ण वेद मन्त्रों, उपनिषदों का सनातन बीज है।[1] अतः सदैव ही भक्ति साधना में भजन, कीर्तन के रूप में संगीत अनिवार्य अंग रहा है। भक्ति से ही संगीत को शक्ति प्राप्त होती है, संगीत द्वारा ही आत्मिक सौन्दर्य प्रस्फुटित होता है। भक्तों की सदा यह धारणा रही है कि संगीत मन को उदात्त की ओर अभिकेन्द्रित करता है।[2] संगीत रूपी रज्जु से ही मन को भगवान् के नाम रूप के साथ बद्ध किया जाता है

- -

1. डा. कपिलदेव पाण्डेय – मध्यकालीन भक्ति साहित्य में अवतारवाद– पृ. 932
2. – वही – पृ. 942
3. – वही – पृ. 943

अतः प्राचीन काल से ही सभी भक्त व सन्त कवियों ने अपनी भावाभिव्यक्ति का माध्यम गीतिकाव्य को बनाया । बौद्ध सिद्ध, जयदेव, नामदेव, विद्यापति, कबीर आदि सभी की कृतियां रागों द्वारा निर्देशित है, वे महान् संगीतज्ञ थे । सन्त नामदेव को ज्ञान की अपेक्षा गाना गाकर व बजाकर भगवान् को रिझाना अच्छा लगता है । इस प्रकार साहित्य व संगीत का अटूट सम्बन्ध रहा है ।

ऋग्वेद व सामवेद वैदिक काल की गीति-काव्य परम्परा के प्रथम काव्य माने जाते हैं । तत्पश्चात् बौद्धधर्म के साहित्य व इतिहास में संगीतियों की घटनाएं भगवान् बुद्ध के उपदेशों के संग्रह, संरक्षण और धार्मिक वादविवादों को दूर करने के लिए हुई थी । महात्मा बुद्ध के परिनिर्वाण के बाद उनके कट्टर शिष्यों ने अनेक संगीतियां (सभाएं) की, वे उन संगीतियों में बुद्ध की शिक्षाओं का गायन, उद्धरण व वार्त्तालाप व संरक्षण करते रहे ।[1] बौद्ध सिद्ध, जिनका समय ई॰ स॰ 800 से लगभग 1200 ई॰ स॰ तक माना जाता है ।[2] इन्होंने "चर्यागीत" लिखे । 22 बौद्ध सिद्धों के चर्यागीतों का संग्रह "बौद्ध गान ओ दोहा" नाम से श्री हरप्रसाद शास्त्री ने सम्पादित किया है, उसके आधार पर यह निश्चित कहा जा सकता है कि ये सब चर्यागीत या चर्यापदों में बौद्ध रहस्यवाद के सिद्धान्तों को प्रतीकों द्वारा व्यक्त किया है । इन सिद्धों ने ही सबसे प्रथम अपनी साधना पद्धति परमतत्व, जीव और जगत् सम्बन्धी अनुभूतियों को लोकभाषा के माध्यम से चर्यापदों व दोहों की शैली में व्यक्त किया ।[3]

"बौद्ध गान और दोहा" में पद रागों के अनुसार संगृहीत किये गये हैं । ये सभी पद कीर्तन के पद थे । इससे यह सिद्ध होता है कि उस काल में गान लिखने व संकीर्तन की प्रथा थी और इन संकीर्तन के गानों को पद कहा जाता था ।[4] ये सब "चर्यागीत" या "चर्यापद" विशिष्ट राग-रागिनियों में

1॰ श्री नगेन्द्रनाथ उपाध्याय – तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य-पृ॰ 27-28
2॰ – वही – पृ॰ 235
3॰ – वही – पृ॰ 183 – 185
4॰ – वही – पृ॰ 252 – 258

निर्देशित होने से यह सम्भावना अधिक है कि सिद्धों द्वारा ही रागों का निर्देश किया गया होगा क्योंकि सिद्धों में संगीत साधना की रुचि थी । सिद्ध वीणापा के वीणा बजाते हुए गान करने की बात प्रसिद्ध है ।[1]

सिद्धों की इसी संगीत परम्परा को सन्त साहित्य में अपनाया गया है । सन्तों की कृतियों का सबसे प्रामाणिक संग्रह ग्रन्थ "श्री गुरु ग्रन्थ साहब" या "आदिग्रन्थ" है । जिसका वैशिष्ट्य यह है कि यह पूर्ण संग्रह रागों के आधार पर किया गया है । यह सिक्खों की दार्शनिक विचारधारा का प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है । 1430 पृष्ठीय इस महत्तीकाय ग्रन्थ में सिक्ख गुरुओं की वाणियों में 31 रागों का प्रयोग हुआ । अन्त में "रागमाला" शीर्षक से रागों की सूची भी है जिसमें 6 प्रधान राग, 30 रागिनियाँ व उनके 48 पुत्र है ।[2] सिक्ख गुरुओं के सिद्धान्तों के अनुरूप जिन भक्तों की वाणियाँ संगृहीत हैं वे प्रत्येक राग के अन्त में रखी गई है । रागानुसार विभाजन होने से सन्तों की वाणियाँ गुरु-ग्रन्थ साहब" में बिखरी हुई है । भक्तों की वाणियों में 22 रागों का प्रयोग हुआ है ।[3] सन्त नामदेव के पदों में प्रयुक्त 17 रागों में से सबसे अधिक पद राग टोडी, राग गोंडा में है ।[4]

सन्त कबीर के पदों व रमैणी में भी प्रयुक्त 17 रागों में राग गौंडी, रामकली, केदारो, आसावरी, आदि प्रमुख राग है जिनमें राग गौंडी, में सबसे अधिक पद है ।[5] दोनों कवियों द्वारा प्रयुक्त 17 रागों में से 13 राग समान है ।

---

1. डा॰ रामकुमार वर्मा - हि॰सा॰आ॰इ॰ - पृ॰ 69
2. डा॰ जयराम मिश्र - श्री गुरुग्रन्थ दर्शन - पृ॰ 32
3. - वही - पृ॰ 33
4. डा॰ मिश्र व मौर्य स॰ ना॰ हि॰ पदावली - पृ॰ 64
5. डा॰ श्यामसुन्दर दास सम्पादित - कबीर ग्रन्थावली - पद - 1 से 152 तक

हिन्दी-गीति-काव्य शैली के जनक

मध्ययुग में वृन्दावन तथा ग्वालियर ठाकुर दरबारी व राजदरबारी संगीत के प्रमुख केन्द्र बन गये थे उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि राजदरबारी संगीत के विकास से पूर्व ही साधु सन्तों, भक्तों ने मोक्ष के साधन रूप में संगीत का आदर किया ।[1] सन्तों की संगीत साधना के फलस्वरूप ही काव्य और संगीत का अभिन्न सम्बन्ध स्थापित हुआ इन्हीं के द्वारा ठाकुरदरबारी संगीत का विकास हुआ ।

सामवेद से चली आती हुई यह परम्परा बौद्ध सिद्धों व नाथों से होती हुई सन्त साहित्य में गृहीत हुई । हिन्दी में विद्यापति से भी पहले नामदेव के रागों द्वारा निर्देशित पदों से यह सिद्ध होता है कि सन्त नामदेव ने ही खड़ी बोली के पद को विभिन्न राग-रागिनियों की शैली प्रदान की अतः वे ही हिन्दी गीति काव्य शैली के जनक माने जा सकते हैं ।[2]

निष्कर्ष

इस विवेचन के आधार पर सन्त नामदेव और सन्त कबीर के जीवन विषयक निष्कर्ष निम्नांकित हैं ।

1. नामदेव का जन्म एक विट्ठल भक्त शैव परिवार में और कबीर का लालनपालन एक नाथमतावलम्बी मुसलमान जुलाहा परिवार में हुआ अतः नामदेव पर वैष्णव परम्परा से भक्ति के संस्कार पड़े तो कबीर पर नाथ परम्परा से नाथमत के संस्कार पड़े ।

---

1. डा॰ भी॰र॰कुलकर्णी – सन्त नामदेवांच्या हिन्दी कवनांतील राम (मराठी लेख) पृ॰ 47 – मराठी स्वाध्याय संशोधन पत्रिका – अंक 8, सन् 1973 में प्रकाशित ।
2. डा॰ विनयमोहन शर्मा – हिन्दी को मराठी सन्तों की देन – पृ॰ 130

2. नामदेव के गुरु नाथपन्थी विसोबा खेचर थे तो कबीर के गुरु वैष्णव भक्त युगपुरुष गुरु रामानन्द थे । अत: गुरु परम्परा से नामदेव को नाथपन्थ का विचारधन मिला तो कबीर को रामानन्द से वैष्णव भक्ति का विचारधन सहज ही उपलब्ध हुआ ।

3. दोनों ही सत्य के पुजारी सन्त कवि थे । उनकी भक्ति का पारिवारिक जनों द्वारा विरोध होने पर भी वे अपनी भक्ति के बल पर आत्मानुभूत सत्य के प्रचार के लिए जीवन भर प्रयास करते रहे ।

4. दोनों का जन्म समाज की हीन समझी जानेवाली जाति में हुआ ।

5. युगानुरूप परिस्थितियों वश दोनों को ही गुरु से दीक्षा लेनी पड़ी क्योंकि तत्कालीन समाज में निगुरा व्यक्ति सम्मान के पात्र नहीं होते थे ।

6. नामदेव को गुरु बनाने की प्रेरणा सन्त ज्ञानेश्वर व उनकी भगिनी मुक्ताबाई द्वारा मिली व कबीर को गुरु बनाने की प्रेरणा नामदेव से मिली होगी ।

7. दोनों ही नाथ परम्परा और भक्ति परम्परा के मिश्रकालीन आविष्कारक थे ।

8. दोनों मूलत: भक्त कवि थे अत: दोनों का काव्य आध्यात्मिकता प्रधान काव्य है ।

9. दोनों ही समाज सुधारक थे । उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके शिष्यों ने उनके नाम पर सम्प्रदाय स्थापित किये । इस प्रकार दोनों ही पंथ प्रवर्तक थे ।

10. कालानुक्रम की दृष्टि से नामदेव पूर्ववर्ती व कबीर परवर्ती सिद्ध होते हैं ।

आगामी पृष्ठों में उनकी कृतियों के आधार पर सन्त नामदेव और कबीर के दार्शनिक विचारधारा का तुलनात्मक अध्ययन किया जायेगा ।